एक कविता - दिलवरजी के नाम

जीवन की अस्त-व्यस्त व्यवस्थाओ से,
जूझते हुए, अकसर देखता हूँ, कि -
मेरा एक-एक मिनट, बड़ी मुश्किल से,
गुरुमत की राहों पर चल पाता है ।
तब, मैं सोचता हूँ,
वो लोग कैसे जीते होंगे जो,
गुरुमत में गोल्डन ज्युबली मना लेते हैं ।
और संत-महात्माओ को, अपनी सेवा से रिझा लेते हैं ।
क्या उनके जीवन में, कभी तनाव नहीं आता ?
क्या उन्हें माया का भ्रम, नहीं भरमाता ?
क्या उन्हें अपनी सज्जनता का दंड़, नहीं भुगतना पड़ता ?
क्या उनपर अपनी परोपकारिता का मद नहीं चढ़ता ?
क्या छोटी-छोटी बातों में, किसी कोने से ,
कभी ईर्ष्या, कभी स्पर्धा, कभी विद्रोह या कभी प्रतिष्ठा का भाव,
बड़ी विनम्रता से अपनी झलक नहीं दिखला जाता ?
क्या सदगुणों के बीच-बीच दुर्गुण
रह-रह कर अपनी उपस्थिति नहीं जतलाता ?
क्या आम इंसानों की तरह, उनमें विकार नहीं होता ?
क्या किसी प्रकाशित दीपक के तले, अंधकार नहीं होता ?
जब सब होता है, तब ऐसा क्या होता है ?
जब सब कुछ होकर भी, कुछ नहीं होता है ?
कि- जब जीवन में, सारे विकारों का अभाव नहीं होता ?
लेकिन, फिर भी, उन सभी विकारों का प्रभाव नहीं होता ?
जब विकार व्यक्तित्व में तपकर, विकास बन जाते हैं ।
आँधी और तूफ़ान छनकर,प्राणदायी स्वाँस बन जाते हैं ।
जहाँ वाद और विवाद, अपना अस्तित्व त्याग, सम्वाद बन जाते हैं ।
जहाँ शिकवा और शिकायत,अपनी ज़बान छोड़,धन्यवाद बन जाते हैं ।
तब, मुझे दिलवरजी की, कही एक बात याद आती है ।
जो इन सवालों का जवाब दे जाती है ।
कि-"अगर दिल से कहूँ, तो मुझमें कोई शक्ति नहीं है ।
ये तो इसकी दया है, वर्ना ,मेरी कोई हस्ती नहीं है ।
सदगुरु को जो अच्छा लगे, वो काम हम कर पायें ।
सदगुरु को हर इक पल दिल से रिझा, रहमत से झोली भर पायें ।
तब मुझे लगता है, कि आधी सदी क्या ,युग-युग भी
सदगुरु की शरण में जा , अमर हो जाते हैं ।
इस दिलवर की दिल से पूजा करने वाले, पूज्य दिलवर कहलाते हैं ।।

कपिल कुमार सरोज